मोह में विवेक और मनुष्यता को खो देने वाले अपने ज्येष्ठ पुत्र ऊदाजी (उदयसिंह) द्वारा हुआ। इस घटना के बाद मेवाड के राजघराने में कलह का नाटय प्रारम्भ हुआ, जिसने मेवाड राजवंश [illegible] ज्वल यश को धब्बा तो लगाया ही, साथ ही मेवाड राज्य का विस्ता[illegible] दिया, उसके हाथ से राजपूतों का नेतृत्व भी छिनवा दिया। मह[illegible] ाणा रायमल के ज्येष्ठ पुत्र संग्रामसिंह (राणासांगा) की दूरदर्शिता, त्याग, वीरता एवं साहस ने [illegible] अंत: कलह की ज्वाला को शान्त किया और मेवाड के गत गौरव को पुन: प्राप्त ही नहीं किया बल्कि उसे भारत का सबसे अधिक शक्तिशाली राज्य बना दिया।

महाराणा कुम्भा के ज्येष्ठ पुत्र ऊदाजी ने पिता की हत्या कर मेवाड़ का राज-मुकुट अपने मस्तक पर धारण किया था। तब हत्यारे के अनुज रायमल सामन्तों एवं प्रजा के सहयोग से अपने अग्रज को परास्त कर मेवाड के महाराणा बने। ऊदाजी शान्त होने वाले जीव न थे, वह दिल्ली के लोदी बादशाह की [illegible] गये और अपनी पुत्री का विवाह उससे करने का वचन देकर, सहायता [illegible] की। ऊदाजी की पुत्री ज्वाला एवं पुत्र सूरजमल को अपने पिता [illegible] पसन्द नहीं आया और उन्होंने पिता के विरुद्ध रायमल का साथ दिया। दिल्ली की सेना पराजित हुई और ऊदाजी के जीवन का भी अन्त हो गया। मेवाड के राजकुल का सम्मान रखने के लिए पिता से भी विद्रोह करने वाले सूरजमल के हृदय में भी मेवाड के राजमुकुट का मोह जागा और महाराणा रायमल के तीनों पुत्रों संग्रामसिंह, पृथ्वीराज और जयमल में भी युवराज-पद पाने के लिए प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हुई। इस गृह कलह ने भीषण रूप धारण किया। इसी अंत: कलह का चित्रण [illegible] है।

[illegible] टाड ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'अनाल्स आफ राजस्थान' में [illegible] संग्रामसिंह का काका (चाचा) लिखा है, दूसरे स्थान पर [illegible] का पुत्र। [illegible] सुविधा के लिए उसे ऊदाजी का पुत्र मान [illegible] ऐतिहासिक नाटक [illegible] व्यक्तियों एवं घटनाओं को लेकर लिखा [illegible] इतिहास और नाटक में कुछ अन्तर आ ही जाता है, क्योंकि [illegible] इतिहास के [illegible] में [illegible] उन्हें आव-[illegible]।

नाटक की लेखन-कला के सम्बन्ध में नया कुछ भी मुझे नहीं कहना।
नाटको के समान यह भी, तीन अकों में और प्रत्येक अक कुछ दृश्यो
त है। आज के नाटककार विदेशी भाषाओ के नाटको
खी अको दृश्यो में करना छोड़ रहे हैं। किन्तु नाटको में
नो पर विभिन्न कालो में घटित घटनाओ का कथोपकथन में वर्णन
है, वर्णन पाठक अथवा दर्शक को उवा देता है। अनेक दृश्यो
ात करने से रंगमच पर अधिक क्रियाएँ एव अधिक घटनाएँ होती हुई
सकती हैं जिससे नाटक में अधिक चुश्ती और गति आती है।
के रगमच को विज्ञान की पूरी-पूरी सहायता प्राप्त नहीं है। यहाँ
(Revolving) रंगमंच नहीं है, अतः यहाँ का नाटककार दृश्य-
अनेक बधनो में बँधा रहता है। मान लीजिये अभी एक राजमहल का
ाया गया, इसके बाद फिर किसी बड़े भवन के अन्दर का दृश्य दिखाना
यह भारत के रंगमच पर संभव नहीं है। एक गहरे दृश्य (Deep
दूसरा दृश्य, जिसमें सजावट भी है, नहीं दिखाया जा सकता,
दोनों के बीच में गहरा दृश्य, जिसमें रगमंच की बहुत कम चौड़ाई
आये और सजावट भी न करनी पडे, रखना पडता है, ताकि रगमच
ाग पर्दे के पीछे है, उसमें आगामी दृश्य तैयार होता रहे। ऐसा करने
ो कभी-कभी अनावश्यक मोड देना पडता है, किन्तु यदि नाटककार
ा ध्यान रखता है तो उसे ऐसा करना ही पडता है।
नाटक में स्वगत एव एकातभाषण सर्वथा नहीं हैं। स्वगत भाषण तो
विक है ही और एकान्त भाषण कहीं स्वाभाविक हो सकता है—जैसे
ागल के चरित्र में—किन्तु अधिकाश में अस्वाभाविक ही होता है।
षण में पात्र के मस्तिष्क में चलने वाला विचार-सघर्ष ही प्रकट होता
ु क्या स्वाभाविक जीवन में कोई इस प्रकार सोचने की क्रिया करता
ऍ चिल्लाकर बडबड़ाने लगे ?
क में पात्रो की सख्या अधिक नहीं होनी चाहिये। थोड़े पात्रों के
क्रमित करने में सुविधा रहती है। इस नाटक में मालवा के सुलतान,
के बादशाह, दिल्ली के बादशाह, संग्रामसिंह की माता, सिरोही-नरेश

और उनकी पत्नी, मेवाड़ की राजकुमारी आनन्ददेवी, राव सूरतान आदि जिनका कथानक से कुछ सम्बन्ध है रंगमंच पर लाये ही नहीं गये। किसी पात्र को एक-दो दृश्य में लाना कुछ जँचता नहीं है। उनके चरित्रों को भली भाँति प्रकट करने के लिए उनसे सम्बन्ध रखने वाले दृश्य बढ़ाने पड़ते हैं और नाटक उपन्यास की भाँति बृहदाकार हो जाता है।

नाटक में अधिक पात्र नहीं होने चाहियें–इसी प्रकार कथानक का फैलाव बहुत लम्बी अवधि में नहीं करना चाहिये। समर-भूमि में अस्सी घाव खाने वाले महाराणा संग्रामसिंह का चरित्र भारतीय इतिहास में अपने शौर्य, सूझ-बूझ और प्रताप में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस नाटक में यदि मैं उनके सम्पूर्ण जीवन के चित्रण के मोह में पड़ जाता तो नाटक अपने उद्देश्य को तो खो ही देता, साथ ही कथानक की कड़ियाँ शिथिल हो जातीं। अतः कीर्ति-स्तम्भ का कथानक बहुत छोटा-सा रखा गया है। संग्रामसिंह के जीवन के अन्तिम भाग पर एक नाटक अलग से लिखने का मेरा विचार है। उन्होंने भारत पर बाबर का राज्य स्थापित न होने देने का भरसक प्रयत्न किया था, एवं आने वाले खतरे से भारतीय राजाओं को सावधान करके एक झण्डे के नीचे उन्हें एकत्रित किया था। किन्तु एक-दो भारतीय राजाओं के विदेशी आक्रमणकारी के प्रलोभन में फँसकर देशद्रोह करने के कारण उन्हें पराजित होना पड़ा था, और अन्त में उनके अपने ही सामन्तों के विश्वासघात ने उनके प्राण ले लिये थे।

इस नाटक की रचना निरुद्देश्य नहीं की है। भारत सदियों की पराधीनता के पश्चात् स्वतन्त्र हुआ है और अब इसे नवार्जित स्वतन्त्रता की रक्षा भी करनी है, इस राष्ट्र को सुखी, समृद्ध और शक्तिशाली भी बनाना है। प्राचीन इतिहास हम को [illegible] दर्पण है। मैंने बार-बार यह दर्पण अपने देश-वासियों के सामने रखा, ताकि हम अपने देश के अतीत को देखकर व्यक्तिगत, [illegible] उन दुर्बलताओं को दूर करें जिन्होंने हमें [illegible] गुणों को ग्रहण करें जिन्होंने हम सभी तक जीवित [illegible] जिनकी राष्ट्र के [illegible]।

—हरिकृष्ण 'प्रेमी'

हेमंत को

चाहते हो तुम कि मैं तुमको खिलौना दूं।
हां, खिलौना चांद-सा सुन्दर सलौना दूं।
किन्तु तुमको दे रहा मैं अक्षरों की दीपमाला।
विश्व का तम कर न पाये जिंदगी का मार्ग काला।

—हरिकृष्ण 'प्रेमी'

हेमंत को

चाहते हो तुम कि मैं तुमको खिलौना दूं।
हां, खिलौना चांद-सा सुन्दर सलौना दूं।
किन्तु तुमको दे रहा मैं अक्षरों की दीपमाला।
विश्व का तम कर न पाये जिंदगी का मार्ग काला।

—हरिकृष्ण 'प्रेमी'

कीर्ति-स्तम्भ

पात्र-सूची

पुरुष-पात्र

महाराणा रायमल	मेवाड के महाराणा
सग्रामसिंह	महाराणा रायमल का ज्येष्ठ पुत्र
पृथ्वीराज	महाराणा रायमल का द्वितीय पुत्र
जयमल	महाराणा रायमल का तृतीय पुत्र
सूरजमल	महाराणा रायमल के वडे भाई ऊदाजी का पुत्र
राजयोगी	भवानी के मन्दिर का पुजारी
कर्मचन्द	अजमेर का नगर सेठ
	कुछ भील, कहार, कुछ सैनिक, द्वारपाल आदि

स्त्री-पात्र

शृंगारदेवी	मेवाड की महारानी
तारा	राव सूरतान की पुत्री, पृथ्वीराज की पत्नी
ज्ञाना	सूरजमल की छोटी वहन
यमुना	दिल्ली की गणिका जो जासूसी का कार्य करती है
	दासी, सैनिकाएँ आदि

पहला अंक

पहला दृश्य

(स्थान—चित्तौड़ दुर्ग में महाराणा कुंभा द्वारा बनवाया हुआ कीर्ति-स्तंभ। समय—प्रभात। पर्दा उठने के पहले नेपथ्य से अनेक सैनिकों के सम्मिलित स्वर में गान सुनाई देता है।)

गान— झंडा ऊँचा रहे हमारा।

इसका रंग केसरिया है,
दिनकर इसके मध्य उगा है,
मानो अभी प्रभात हुआ है।
छाया प्राणों में उजियारा।
झंडा ऊँचा रहे हमारा।

लहर-लहर लहराने वाला,
उर में जोश जगाने वाला,
करता रण-मद में मतवाला,
वीरों को प्राणों से प्यारा।
झंडा ऊँचा रहे हमारा।

बाप्पा के वंशज बलिदानी,
एकलिंग के गण अभिमानी।
कभी शत्रु से हार न मानी।
यम को भी रण में ललकारा।
झंडा ऊँचा रहे हमारा।

(अन्तिम छन्द गाया जा रहा है कि पर्दा उठता है। कीर्ति-स्तम्भ का केवल उतना भाग दिखाई देता है जितना रंगमंच की ऊँचाई तक आ सकता है। कीर्ति-स्तम्भ पर हिन्दू देवी-देवताओं की कलापूर्ण

मूर्तियां अंकित दिखाई देती हैं। महाराणा रायमल एवं उनके नव-युवक पुत्र संग्रामसिंह तथा पृथ्वीराज एवं जयमल प्रवेश करते हैं। महाराणा रायमल मेवाड की राजसी पोशाक में हैं, मेवाड राज्य का विशेष राजचिह्न छगी धारण किये हुए एवं हाथ में दुधारा लिये हुए हैं। तीनो राजकुमार भी भव्य राजपूती साज-सज्जा में हैं और तीनो ही अपने हाथो में तलवार लिये हुए हैं।)

रायमल—(उल्लसित होकर) मेवाड के वीर सैनिको की गंभीर वाणी में मेवाड-राज्य-पताका का यह यश-गान सुनकर प्राण पुलकित हो उठते हैं।

संग्रामसिंह—हाँ, पिताजी, सहस्रो प्राणो का सम्मिलित स्वर मेवाडी वीरो की एकता का परिचय दे रहा है। सागर की उत्ताल तरंगो के सुगम्भीर गान-सी इस स्वर-लहरी में प्रसुप्त प्राणो को जाग्रत कर देने की शक्ति है।

पृथ्वीराज—निश्चय ही, इस उन्मत्त कर देने वाले तुमुल निनाद को सुनकर मैं तो नशे मे झूम उठता हूँ। जी चाहता है, चट्टानो को भुजाओ मे भरकर चूर कर डालूं, तूफान से आदोलित पारावार मे तरणी छोडकर प्रलयकरी लहरो पर झूला झूलूं, आकाश के नक्षत्रो को तोड लाऊँ।

जयमल—मेवाड की राज्य-पताका के गौरव की रक्षा करने के लिये हम यम से भी लोहा लेने को प्रस्तुत हैं।

रायमल—मुझे अपने सुयोग्य, वीर, सुपुत्रो पर अभिमान है। मेवाड की चिरचंचल राज्यलक्ष्मी शताब्दियो से गहलोतो के रक्त से अभि-षिक्त हो रही है, किन्तु अभी उसकी रक्त-पिपासा शान्त नही हुई। (थोडी देर विचार-मग्न रहकर) चित्तौड के प्रथम शाका की गाथा से तुम परिचित हो ?

संग्रामसिंह—ऐसा कौन अभागा मेवाडी होगा जो महासती वीरांगना पद्मिनी के ज्वाज्वल्यमान जौहर की गाथा से अनुप्राणित नही होता

रायमल—महासती पद्मिनी के जौहर की ज्वाला मेवाडियो के प्राणो को चिरप्रज्वलित रखेगी, किन्तु मुझे तो आज महाराणा लाखा और उनके ग्यारह पुत्रों के बलिदान का अमर आख्यान याद आ रहा है। मेवाड की राज्यलक्ष्मी ने स्वप्न में महाराणा लाखा से कहा था—"मै भूखी हूँ—मुझे राजबलि चाहिये—गहलोत राजवश के बारह वीर पुरुषो का बलिदान चाहिये !"

सग्रामसिंह—हां पिताजी, महाराणा लाखा और महारानी ने नित्य एक-एक कर अपने ग्यारह पुत्रों को रण-सज्जा मे सजाकर, हृदय-रक्त से टीका कर, आरती उतारकर मुस्कराते हुए वीर-गति पाने को रणभूमि मे भेजा था और दिशाओं ने विस्मित होकर देखा था कि उनकी आखो मे एक भी अश्रु-बिन्दु नही झलका।

रायमल—हाँ बेटा, तप्त मरुस्थल के समान उनके लोचन जलहीन थे। राजपूत को अपना हृदय पत्थर का बनाना पडता है।

जयमल—किन्तु, पिताजी आपको अकस्मात् महाराणा लाखा के उस भयानक स्वप्न की याद क्यों आई ? क्या आपने भी

रायमल—(बात काटकर) मैंने स्वप्न नही देखा। बेटा ! मै तो प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि आकाश से बाते करने वाला जो यह कीर्ति-स्तम्भ, खड्ग से मेवाड़ की राज्यलक्ष्मी की मांग मे अखड सिंदूर भरने वाले पूज्य पिताजी महाराणा कुम्भा ने खडा किया है, उसकी आधार-शिलायें कांप रही है। जिस प्रकार घोर शीतकाल की रात्रि मे निर्धन नग्न व्यक्ति की कृश काया थर-थर कांपती है उसी प्रकार आज कीर्ति-स्तम्भ की शिलाएँ कांप उठी है।

पृथ्वीराज—शंकाशीलता कायरों का स्वभाव है पिताजी, आपको व्यर्थ विभ्रम में नही पडना चाहिये।

रायमल—(रोषयुक्त मुद्रा में) बडी दया की तुमने जो अपने पिता को केवल कायर और 'विभ्रम में पडा' ही कहा—यह नही कहा कि

मेरे मस्तिष्क मे विकार उत्पन्न हो गया है, जिस प्रकार तुम्हारे ताऊ ऊदाजी ने स्वर्गीय महाराणा कुम्भा के सम्वन्ध मे कहा था और अपने पिता के मस्तिष्क का विकार दूर करने के लिये उनका मस्तिष्क ही काट डाला।

पृथ्वीराज–क्षमा कीजिये पिताजी, आपने मेरा आशय नही समझा। कीर्ति-स्तम्भ की दृढता पर अविश्वास करना सीसोदियो* के साहस और शौर्य पर सदेह करना है।

रायमल–साहस और शौर्य तो सीसोदिया-रक्त के स्वाभाविक गुण है, किन्तु ये गुण दोधारी तलवार के समान है, जिनका असावधानी से प्रयोग करने से स्वय के आहत होने की सभावना रहती है। ये सद्‌गुण अवगुण वनकर आत्म-नाश का कारण वन जाते है।

सग्रामसिह–वन क्या जाते है, वने हुए है। साहस और शौर्य अधे है—उन्हे विवेक की आँखे चाहिये। शक्ति हृदय-हीन है, उसे वलि-दान-भावना से कोमल-हृदया वनाने की आवश्यकता है।

रायमल–तुम ठीक कहते हो, सग्रामसिह, वाप्पा रावल के वशजो को अभिमान, स्वार्थ, सत्ता-प्राप्ति की तृष्णा, राज्य-लिप्सा और भयानक दुर्गुणो ने ग्रस रखा है, तभी तो मै कहता हूँ कीर्ति-स्तभ की शिलाये कांप उठी है।

जयमल–जड कीर्ति-स्तभ भूकप के अतिरिक्त किसी और कारण से भी कांप सकता है क्या, पिताजी ?

रायमल–कीर्ति-स्तभ को जड कहकर तुम अपनी जड बुद्धि का परिचय दे रहे हो जयमल ! मै तो इस कीर्ति-स्तभ के रूप मे स्वर्गीय महाराणा कुम्भा को ही देख रहा हूँ, जो, जान पडता है, अपने सबल हाथो मे मालवा के सुलतान और गुजरात के वादशाह की

---

*मेवाड राजवंशी प्रारम्भ मे गहलोत कहलाते रहे—वाद मे सीसोदिया कहलाये। इस नाटक मे दोनो ही नामो का प्रयोग किया गया है।

गर्दन थामे खडे है, जिन पर विजय पाने के उपलक्ष्य मे यह कीर्ति-
स्तभ स्थापित किया गया है।

संग्रामसिंह–निश्चय ही कीर्ति-स्तभ का प्राणवान् अस्तित्व सीसोदियाओ
को युग-युग तक प्रेरणा प्रदान करेगा।

रायमल–किन्तु, कीर्तिस्तभ घायल हो गया है।

पृथ्वीराज–घायल हो गया है ?

रायमल–हां पृथ्वीराज ! कीर्ति-स्तम्भ को मर्मान्तक आघात पहुँचा
है। आज उसकी काया के साथ आत्मा भी घायल है। ऊदाजी ने
अपने पिता वीर शिरोमणि महाराणा कुभा पर जो खड्ग-प्रहार
किया था उसने कीर्ति-स्तभ को क्षत-विक्षत कर दिया है। मुकुट
के मोह मे पडकर एक पुत्र ने, वाप्पा रावल के एक वशज ने,
पिता के प्राण ले लिये, इससे इस स्तभ की प्रत्येक शिला काँप
रही है।

पृथ्वीराज–निश्चय ही ऊदाजी ने मनुष्यता को लज्जित करने वाला
नृशस कार्य किया है, किन्तु मै पूछता हूँ कि क्या उनका यह
दुष्कर्म सर्वथा अस्वाभाविक है ? पिता जब सत्ता-मद मे चूर रह-
कर बूढे होने पर भी अपने पुत्र के सबल हाथो मे शक्ति और
अधिकार नही सौपते तब पुत्र की आकाक्षाएँ पथ-भ्रष्ट हो जाये
तो उसमे अस्वाभाविक क्या है ? स्वर्गीय महाराण कुम्भा ने
महाविटप की भाँति छाकर अपने आत्मीयजनो के विकास को
रोक दिया। ऊदाजी का असन्तोष तो अवरुद्ध ज्वालामुखी की
भाँति फट ही पडा. किन्तु पिताजी, आपको भी तो निर्वासित
जीवन ही व्यतीत करना पडा। मै तो कहूँगा आपमे पिता की
अन्यायपूर्ण आज्ञा का सामना करने का साहस नही था।

संग्रामसिंह–पृथ्वीराज, तुम्हारे प्राणो मे यह विष किसने भर दिया ?
पिताजी यदि ऊदाजी की भाँति राज्य-सिंहासन पर आसीन होने

के लिये पिता पर खड्ग-प्रहार करते तो क्या ससार उसे वीरता कहता। राजा वनने की अपेक्षा मनुष्य होना मानव के लिये अधिक गौरव की बात है, पृथ्वीराज! प्राण लेने की वीरता से त्याग की वीरता महान् है।

पृथ्वीराज–कायरता का दूसरा नाम त्याग है। राज्य-लिप्सा, सत्ता की आकाक्षा, शासन करने की प्रवल इच्छा राजपूत की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। मै पूछता हूँ, क्या पिताजी ने राज्य-लिप्सा-वश ही अपने अग्रज ऊदाजी से मेवाड का राज्य नही छीना?

सग्रामसिह–कदापि नही। हत्यारे को दड देना एव मेवाड की स्वाधीनता की रक्षा करना आवश्यक था, केवल इसीलिये पिताजी को मेवाड के राजमुकुट के लिये सघर्ष करना पडा, अन्यथा वह एक वार सिहासन पर लात मारकर चले ही गये थे।

पृथ्वीराज–क्योकि वह जानते थे कि वडे भाई के रहते छोटे भाई का सिहासन पर कोई अधिकार नही है। जो वस्तु उनकी नही थी उसी का त्याग किया था उन्होने। हुँ—इसे तुम त्याग कहते हो?

रायमल–पृथ्वीराज, तुम्हारी उद्दडता पराकाष्ठा को पहुँच चुकी है। मेरे स्थान पर महाराणा कुभा होते तो इसी क्षण तुम्हे मेवाड की सीमा से निर्वासित कर देते।

पृथ्वीराज–सत्य को प्रकट करने का पुरस्कार यदि मेवाड राज्य से निर्वासन के रूप मे प्राप्त हो तो पृथ्वीराज उस अभिशाप को वरदान ही मानेगा—क्योकि उसे नया राज्य स्थापित करने का अवसर प्राप्त होगा।

सग्रामसिह–ऊदाजी की भाँति तुम्हारे प्राण भी राज्य-लिप्सा से व्याकुल है, पृथ्वीराज!

पृथ्वीराज–जिनका पेट भरा हुआ है, वे भूखो की व्याकुलता की हँसी उडा सकते है। आज के मेवाड के युवराज एव आगामी कल के

महाराणा संग्रामसिंहजी ! मेवाड के वर्तमान परम प्रतिष्ठित राजवंश के संस्थापक अपने मामा के शव पर अपना राजसिंहासन रखकर एक आदर्श कायम कर गये है।

रायमल–छि' पृथ्वीराज, तुम सत्ता-प्राप्ति के मद में उन्मत्त हो गये हो। वीरवर वाप्पा रावल के शुभ उद्देश्य से किये गये आदर्श कार्य को अपने अंतर की कालिमा से कलंकित करने का यत्न मत करो। [जहाँ देश-हित का प्रश्न उपस्थित हो हमें सारे नाते, ममता, माया और मोह के ऊपर उठकर कार्य करना चाहिये। कृष्ण को अपने अत्याचारी मामा का वध करना पडा था, विदेशियो के हाथ देश की स्वाधीनता को रहन रखने का संकल्प करने वाले देश-द्रोही मामा के मस्तक से राजमुकुट छीनकर विदेशी सत्ता की भारत में बढती हुई बाढ़ को अपने पराक्रम से रोकने वाले वाप्पा रावल का भारतीय इतिहास चिरऋणी रहेगा। सदुद्देश्य के हित हमें अपनो से भी संग्राम करना पड़ जाता है।] मैंने भी अपने अग्रज पितृहन्ता ऊदाजी से राजमुकुट छीनकर आदि पुरुष वाप्पा रावल की परंपरा का पालन किया है। ऊदाजी ने पिता की हत्या की, इस अपराध के लिये संभवत. मेवाड़ राजवंश उन्हे क्षमा भी कर देता, किन्तु मालवा और गुजरात की विदेशी राजसत्ताओं को मेवाड़ राज्य की भूमि देकर अपना सहायक, सहायक क्या— स्वामी बनाना मेवाड़ का स्वाभिमान कैसे स्वीकार करता ! मेवाड की वीर प्रजा, सीसोदिया शाखा के शूर वंशज, मेवाड की सम्मान-रक्षा में शताब्दियो से मस्तक चढाते रहने वाले सामंत आदि सबके एक स्वर आग्रह को रायमल कैसे टालता ? मेवाड राज्य का अस्तित्त्व जिनकी आंखो मे शूल की भांति चुभता है ·

(रायमल का वाक्य पूर्ण भी नहीं होने पाता कि सूरजमल प्रवेश करता है। सूरजमल भी तीनो राजकुमारो के समान बहुमूल्य

वेश-भूषा में है एव हाथ में तलवार लिये हुए है, किन्तु उसके वस्त्रो में लम्बी यात्रा के कारण कुछ मलिनता-सी आ गई है। आयु में वह सग्रामसिंह से बडा है, शरीर हृष्ट-पुष्ट एव चेहरा तेजस्वी है।)

सूरजमल–(महाराणा रायमल के चरण छूकर उनके अधूरे वाक्य में जोडता हुआ) सीसोदिया आज उन्ही के चरण चूमने में अपना गौरव मानते है।

जयमल–(व्यग करते हुए) क्या पितृहता के पुत्र को इसका पश्चात्ताप है ?

सूरजमल–है क्यो नही ? क्या मेरे शरीर में गहलोत-रक्त प्रवाहित नही है, क्या मैं भगवान् राम का वशज नही हूँ ?

पृथ्वीराज–भगवान् राम के वशज होते हुए भी तुम पितृहता ऊदाजी के पुत्र हो। तुम्हारा मुंह देखना भी पाप है।

सग्रामसिंह–पृथ्वीराज, अभी तो तुम ऊदाजी के अपराध को स्वाभाविक कह रहे थे और अब

पृथ्वीराज–और अब मैं उसका पुत्र होना भी अपराध कह रहा हूँ। यही कहना चाहते हो न ? एक अभावग्रस्त व्यक्ति डाकू बन जाता है—यह स्वाभाविक है—किन्तु फिर भी उसके हिंसक कार्य अपराध ही है और उनके अपराधो का दण्ड समाज उसकी सन्तान को भी देता है।

सूरजमल–यदि सीसोदिया राजवश ने विवेक की आँखे खो दी है तो उन्हें त्रिलोचन शकर भी प्रकाश देने की क्षमता नही रखते। पिताजी ने जो किया उससे सम्पूर्ण शाखा लज्जित है, लेकिन पिता के अपराध का प्रायश्चित्त उसकी सन्तान करना चाहे तो उसका मार्ग अवरुद्ध कर देना, उसकी कर्तव्य-भावना को घृणा के प्रहार से आहत कर देना और उसे भी पाप-पथ पर जाने को बाध्य करना क्या न्यायपूर्ण कार्य है ?

[illegible]–पिता के पाप का प्रायश्चित्त तुम कैसे कर पाओगे, सूरजमल ?

सूरजमल–बाप्पा रावल की राजगद्दी के गौरव की रक्षा मे प्राणो की आहुति देकर काकाजी ! हत्यारे का बेटा होने के कारण ही तो मेरे अन्त करण से मानवता की सम्पूर्ण सद्प्रवृत्तियाँ समाप्त नही हो गई ?

संग्रामसिह–पापी का पुत्र पुण्य के मार्ग पर अग्रसर होना चाहे तो समाज को उसका मार्ग प्रशस्त करना चाहिये ।

जयमल–इसका अर्थ हुआ कि वेश्या की पुत्री को समाज मे भद्रकुल की कन्या के समान विश्वास और आदर प्राप्त होना चाहिये ।

संग्रामसिह–अवश्य ! प्रत्येक व्यक्ति हमारे समाज का अग है—समाज की शक्ति है । समाज के अगो को हम काट-काट कर फेकेंगे अथवा उन्हे गलने-सडने देगे तो समाज दुर्बल होगा ।

पृथ्वीराज–किन्तु दादा भाई, साँप का बेटा भी साँप होता है, यह प्रकृति का नियम है ।

सूरजमल–इसी नियम के अनुसार सिह का बेटा भी सिह होना चाहिये—तब महाराणा कुम्भा के पुत्र ऊदाजी कैसे हुए ?

संग्रामसिह–अच्छा-बुरा होना केवल वश और माता-पिता के चरित्र पर निर्भर नही होता, पूर्व जन्म के सस्कार और इस जन्म की परिस्थितियाँ और वातावरण का प्रभाव भी पडता है ।

पृथ्वीराज–मै केवल इस जन्म को मानता हूँ ।

संग्रामसिह–इसका अर्थ यह हुआ कि विश्व-नियन्ता अन्धा है । ससार मे जो विषमता दृष्टिगोचर हो रही है—अर्थात् कोई निर्धन है, अभावो से पीडित है और कोई धनी है—सुखो के पालने मे झूलता है तो, यह निष्कारण है ?

पृथ्वीराज–विषमता मनुष्यो के स्वार्थ की सृष्टि है । वैभव और सत्ता के धनी, दीन-दुःखी और पीडितो के कष्टो और अभावो को पूर्व जन्म के कर्मों का फल कहकर अपने पापो को, अन्यायों को न्याय-

पूर्ण सिद्ध करने का यत्न करते है। यह ससार है दादा भाई सघर्ष ही इसका जीवन है।

सूरजमल–इस तर्क-वितर्क मे मुझे अपनी वात कहने का भी अवस नही मिलेगा क्या ?

रायमल–मेवाड मे प्रत्येक व्यक्ति को अपनी वात कहने की स्वतन्त्र है, सूरजमल ! वोलो क्या कहना चाहते हो ?

सूरजमल–पिताजी पतन-पक मे इतने लिप्त हो गये है कि अव वह राम के वशजो के मुख पर ऐसी कालिमा पोत देना चाहते है जिसे विधाता भी न पोछ पाये।

पृथ्वीराज–जैसे अभी उन्होने कुछ कसर छोडी है।

जयमल–पिता की हत्या से भी अधिक कुत्सित कार्य वह क्या करन चाहते है ?

सूरजमल–पिता की हत्या से भी अधिक घृणित कार्य हो सकते है जय मल ! पिताजी ने दिल्ली के लोदी वादशाह से सहायता पाने वे लिये अपनी पुत्री ज्वाला का, सीसोदिया शाखा की एक राज कुमारी का विवाह उससे करना स्वीकार किया है।

रायमल–अर्थात् अभी यह कुल को कलकित करने वाला दुष्कृत्य ह नही पाया है।

सूरजमल–नही, क्योकि मैने ज्वाला को दिल्ली मे ही गुप्त स्थान प छिपा दिया है, लेकिन दिल्लीपति की भुजाये विशाल है। उस गुप्तचरो के जाल मे वह कभी भी फँस सकती है। अत हमे शी ही कुल-गौरव की रक्षा का उपाय करना चाहिये।

सग्रामसिह–दिल्लीपति से लोहा लेने के अतिरिक्त और उपाय हो ह क्या सकता है ?

रायमल–सूर्य पश्चिम से भले ही उदित हो, किन्तु सीसोदिया राजव की कन्या भारत की स्वाधीनता के शत्रुओ के हाथ मे नही जा

पावेगी।

रजमल–जय हो, महाराणा रायमल की जय! सीसोदिया राजवंश की जय! महाराणा के निश्चय ने मेरे प्राणों में नवजीवन संचारित कर दिया है।

थ्वीराज–पितृहन्ता ऊदाजी का पुत्र सत्य बोल रहा है या हमें फँसाने की चाल चल रहा है, इस सम्बन्ध मे मेरा मन दुविधा में है। फिर भी मैं प्रत्येक ऐसे प्रस्ताव का समर्थन करूँगा जिसमे लोहे से लोहा बजाने का अवसर प्राप्त हो।

रजमल–तुम सम्भवतः अपने ऊपर भी विश्वास नही करते?

थ्वीराज–पृथ्वीराज विपत्ति का भी विश्वास करता है, काले नाग से भी खेल सकता है। समय इसका प्रमाण देगा।

ायमल–बाप्पा रावल के वंशज कुल-कीर्ति को अक्षुण्ण रखने के लिये सर्वनाश के मुंह मे कूदना अपना कर्तव्य समझते है। कुछ भी हो, ज्वाला का दिल्लीपति से विवाह रोकना ही पड़ेगा। चलो, राजमहल में चलकर इस सम्बन्ध मे योजना बनाई जाये।

(सबका प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन)

दूसरा दृश्य

(स्थान–दिल्ली में यमुना-तट से कुछ दूर पथ। समय—सूर्योदय के पूर्व ब्राह्ममुहूर्त। पर्दे से ढकी हुई पालकी में जिसे दो कहार ले जा रहे हैं, ज्वाला मच के वाम पार्श्व से प्रवेश करती है। पालकी के साथ चार राजपूत सैनिक हैं, किन्तु हैं साधारण व्यक्तियो की वेश-भूषा में और इस प्रकार चल रहे हैं मानो पालकी से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है। जैसे ही पालकी का प्रवेश होता है, वैसे ही दूसरे पार्श्व से भिखारिन के रूप में यमुना प्रवेश करती है। वह कुष्ठ रोग से पीडित जान पडती है—उसके हाथो में रोग के चिन्ह स्पष्ट दिखाई देते हैं। यमुना आकर इस प्रकार खडी होती है कि पालकी को ढोने वाले कहारो की गति रुक गई है।)

पहला कहार–हट सामने से, चुडैल। रास्ते में ही आ धमकी।

ज्वाला–(पालकी के अन्दर से बिना मुंह निकाले) कौन है ?

यमुना–रानीजी का राज बना रहे, सुहाग अटल रहे, अपाहिज कोढी भिखारिन को कुछ मिल जाये।

(पालकी के साथ साधारण वेश में चलने वाले सैनिक एक दृष्टि डालकर आगे बढ जाते हैं एव दूसरे पार्श्व से प्रस्थान कर जाते हैं।)

ज्वाला–दूर हट, बडा सुहाग अटल करने आई है।

यमुना–रानीजी, जो मनुष्य पर दया करता है, उस पर भगवान् प्रसन्न होते हैं। भगवान् के नाम पर कुछ दे दो, माई। जिन्हे भगवान् ने दिया है उन्हे भगवान् की सन्तान दीन-दुखियो को देना ही चाहिये।

पहला कहार–तू हटती है या धक्के खाना चाहती है।

यमुना–दाता दे और भण्डारी का पेट फटे। अरे भाई, मै तो रानीजी से याचना कर रही हूँ।

ज्वाला–तू बहुत ढीठ है री।

यमुना–रानीजी, यह संसार भी तो बहुत ढीठ है—गरीबों की पुकार पर जरा भी ध्यान नही देता। गरीबो की लाशो को कुचलती हुई अमीरो की पालकियाँ बढती जाती हैं।

दूसरा कहार–गरीब लोग भी तो खोपडी पर सवार होने का यत्न करते है।

यमुना–ओहो, मेंढकी को भी जुकाम होने लगा। कैसे बोलता है, मानो दिल्ली का नगर-सेठ है। धातु के दो टुकड़ों में धनवानो की पालकी उठाने वाला तू किस बिरते पर धनवानो का पक्ष लेता है ?

ज्वाला–(पालकी का थोड़ा-सा पर्दा उठाकर बाहर झाँककर यमुना से) कौन है री तू ? (पालकी उठाने वालों से) जरा रुको।

(कहार पालकी को भूमि पर रखते हैं।)

मुना–आप कौन है ?

वाला–तुझे यह पूछने की आवश्यकता क्या है ?

मुना–मैं आपकी तरह पालकी मे मुंह छिपाये तो बैठी नही हूँ जो आप मुझसे पूछती है, 'तू कौन है ?' मेरी रोग-ग्रस्त अपाहिज काया अपना परिचय दे तो रही है। निर्दय भगवान् ने जिसे कोढी बना दिया है, समाज से जिसे केवल घृणा प्राप्त होती है, ऐसी पीडित नारी आप जैसी वैभव की पालकी में बैठने वालियों से दया की भीख माँगकर ही अपना जीवन चला सकती है।

ज्वाला–सच कहूँ, तू भिखारिन है ना री ?

यमुना–हे भगवान्, वैभव ने जिनके हिये की दया छीन ली है वे अभाव-ग्रस्तों की दुर्दशा को भी धोखा समझते हैं। संसार मे मनुष्यता है ही नही क्या ?

ज्वाला–भिखारिन तो तू बनी है किन्तु भिखारिन की भाषा न सीख पाई।

पहला कहार–बोलती तो ऐसे है, मानो कभी दिल्ली की पटरानी

रही है।

यमुना—(व्यंगपूर्वक कहार से) कैसे मीठी बात कह रहे हो राजा। पटरानी और भिखारिन सब माया के खेल हैं—स्वप्न में खेले जाने वाले नाटक हैं! क्या पता, किसी जीवन में यह कोढी भिखारिन किसी सम्राट् की सम्राज्ञी रही हो, किन्तु आज तो पथ पर भटकने वाली दुखिया नारी है। आज तो वह तुम्हारे जैसे पालकी उठाने वाले की पत्नी भी नही वन सकती।

ज्वाला—तो तेरा इस कहार से व्याह करा दूं, बोल?

यमुना—मेरा व्याह तो यमराज से होगा।

ज्वाला—मरकर भी तू रानी ही वनना चाहती है। चीथडे पहनने पर भी तेरा आकाक्षाओ के पख लगाकर उडने वाला हृदय अपना रूप छिपा नही पाया। तू कोई भी हो—आज सक्राति का पर्व है—ब्राह्ममुहूर्त मे तूने याचना की है, तुझे भीख अवश्य मिलेगी। वढा हाथ।

(यमुना हाथ वढाती है। ज्वाला पालकी में से हाथ निकाल फुर्ती से यमुना का हाथ पकड लेती है।)

यमुना—क्या करती हो, रानी जी? कोढ छूत की बीमारी है।

ज्वाला—ह ह कोढ! (पालकी से बाहर आती है।) स्वर्ण के लिए जीवन बेचने वाली नारी, तू स्वय समाज की छाती का कोढ है। किसलिये अपने सुकुमार शरीर को विकृत बनाती है, बोल?

(यमुना हाथ छुडाना चाहती है। ज्वाला दूसरे हाथ से अपनी चोली से कटार निकालती है।)

ज्वाला—छूटने का यत्न मत करो। मै सक्राति के पर्व पर यमुना में स्नान करने आई हूँ, तेरे रक्त से मुझे हाथ न रँगने पडे।

यमुना—बाप रे, भयानक स्त्री हो आप!

ज्वाला—भयानक बने बिना इस युग मे नारी अपने सम्मान की रक्षा कर ही नही सकती।

मुना–आप ठीक कहती है रानीजी, स्त्री को आत्मरक्षा के लिये हिंसक बनना ही पडता है।

(यमुना भी अपने दूसरे हाथ से वस्त्रो में छुरी निकालती है—इसी समय एक सैनिक आकर यमुना का छुरी वाला हाथ पकड लेता है। यह सैनिक उन्हीं चार व्यक्तियो में से है जो पालकी के साथ आये थे लेकिन आगे निकल गये थे।)

सैनिक–किन्तु पुरुष के कठोर हाथो से छुटकारा पाना नारी के वस का नही है।

(यह कहता हुआ सैनिक यमुना के हाथ से छुरी लेता है।)

ज्वाला–डरो नही, यमुना।

यमुना–क्या कहा ?

ज्वाला–दिल्लीपति के दरवार मे मैंने तुम्हारा नृत्य देखा है—गाना सुना है। वेश वदलने पर भी तुम अपने स्वर के माधुर्य को छिपा न पाईं। तुम्हारे पहले शब्द ने ही दिल्ली दरवार की वह मदभरी महफिल आँखो के आगे घुमा दी। दिल्लीपति की गुप्तचर वनकर किसी कुमारी को जुही की कली-सी पवित्रता के पीछे तुम हाथ धोकर क्यो पडी हो ? निश्चय ही तुममे शक्ति है, किन्तु इस शक्ति का उपयोग करो दुष्टों को काली नागिन वनकर डसने मे।

यमुना–आपको भ्रम हुआ है, रानीजी।

ज्वाला–ज्वाला भ्रम से वहुत दूर है। तुम जैसी गणिकाओ को स्वर्ण की चमक मे अधी वनाकर दिल्लीपति समझे है कि किसी भी नारी के जीवन से खिलवाड किया जा सकता है।

(यमुना नीचे पडा हुआ पत्थर उठाकर फेंकना चाहती है, लेकिन सैनिक उसके हाथ का पत्थर छीन लेता है।)

ज्वाला–पत्थर फेंककर किसे वुलाना चाहती हो यमुना ! यमुना के तट पर रक्त की नई यमुना वहाना चाहती हो ? अपना भला चाहती

हिंसक प्राणी पानी पीने आते हैं और सिंह से भी भयानक पुरुष भी कभी-कभी आ पहुँचते है।

तारा–राजकुमार, तुम्हारी तरह इस राजपूत बाला को भी विपत्तियो को आमन्त्रित करने मे आनन्द आता है। संकट मेरा चिर सहचर है। तुम मेवाड़ के राजकुमार हो, हिन्दुओ के सूर्य कहाने वाले महाराणा के पुत्र, किन्तु मै भी कहने के लिये राजकुमारी हूँ। एक छोटे-से राज्य के अधिपति की पुत्री हूँ।

पृथ्वीराज–किस राज्य के अधिपति की ?

तारा–टोडा दुर्ग के स्वामी राव सूरतान को आप जानते हो ?

पृथ्वीराज–उनके दर्शन पाने का अवसर तो नही मिला, किन्तु नाम सुना है, यह भी सुना है कि लालपठान ने उनसे टोडा दुर्ग छीन लिया है।

तारा–हाँ राजकुमार! आपने ठीक ही सुना है। अब हम इस वन-प्रदेश मे रहकर अपनी बपौती को पुन प्राप्त करने के लिये साधना कर रहे है। पिताजी को इस बात का खेद है कि उनके कोई पुत्र नही है, जो इस संघर्ष मे उनसे कंधे से कंधा मिलाकर शत्रु से लोहा लेने मे साथ देता। इसलिये उनकी पुत्री तारा ने शस्त्रो की साधना की है, घोड़े की पीठ पर बैठकर दुर्गम स्थानो की इसने सैर की है, धनुर्विद्या का अभ्यास किया है।

पृथ्वीराज–सुना है तुम्हारे मोहक रूप की ख्याति ही लालपठान को टोडा दुर्ग मे खींच लाई। उनके प्रस्ताव की अवहेलना ही राव सूरतान की सारी विपत्तियो का कारण है।

तारा–हाँ राजकुमार! नारी का सौन्दर्य कभी-कभी स्वजनो के लिये अभिशाप बन जाता है। मेवाड़ का इतिहास भी तो इसका साक्षी है। पद्मिनी ने चित्तौड़ का शाका करवाया, उसी प्रकार आज यह तारा अपने पिता के संकट का कारण बनी हुई है, किन्तु आप

निश्चय जानिये, मै एक दिन उस लपट लालपठान से अपना दुर्ग छीन कर रहूँगी और उसकी छाती अपनी छुरी से विदीर्ण करूँगी ।

पृथ्वीराज–तुम्हारे प्रण और साहस की मै प्रशसा करता हूँ । मनुष्य मे सकल्प की दृढता और साहस हो तो साधनो की कमी उसके मार्ग की बाधा नही बन सकती । निश्चय ही तुम्हारा सकल्प पूरा होगा । किन्तु तुम नारी हो, बिना पुरुष के सहयोग के वैरी से प्रतिशोध न ले सकोगी । प्रकृति ने आज अचानक अनायास दो प्राणियो को इस निर्जन स्थान पर एक दूसरे के सामने खडा कर दिया है । हमारे मिलन पर आकाश मे चांद मुस्करा रहा है, सरिता गीत गा रही है । लाओ अपना यह तलवार वाला हाथ, मेरे हाथ मे दो ।

(तारा का हाथ पकड लेता है । तारा गर्दन नीचे झुकाती है ।)

पृथ्वीराज–पृथ्वीराज के भयकर बाढ के समान तटहीन जीवन को मानो किनारा मिल गया । कितनी ही सुकुमारियाँ रूप और यौवन की मादक प्यालियाँ लेकर इसे बेहोश करने आई; किन्तु विफल रही । बाढ को किसने बाहुओ मे बाँधा है । किन्तु तुम धरती के समान विशाल हो, तुम्हारा छोर मै नही पा सकता । पृथ्वीराज के जीवन मे नारी को कोई स्थान आज तक प्राप्त नही हुआ । यह तो रात्रि मे भी अपनी तलवार को ही वक्ष से लगाकर सोता रहा है । किन्तु आज प्रथम बार उसने जाना कि नारी के बिना पुरुष का जीवन अपूर्ण है ।

(तारा पृथ्वीराज के हाथ मे अपना हाथ अलग कर लेती है । पृथ्वीराज विस्मय से तारा की तरफ देखता है ।)

तारा–राजकुमार, वीर, साहसी और सत् पुरुष का अपमान करना मै पाप समझती हूँ, फिर भी मुझे कहना पडता है कि हमारा यह

आकस्मिक मिलन नदी-नाव-सयोग के अतिरिक्त कुछ नही। हमारे मिलन-मार्ग मे अभी लालपठान का अस्तित्व चट्टान की तरह अडा हुआ है।

पृथ्वीराज—उस चट्टान को पृथ्वीराज चकनाचूर कर देगा।

तारा—किन्तु जिस मस्तक मे तारा को प्राप्त करने का कुविचार हुआ था उसे तारा अपनी तलवार से काटना चाहती है।

पृथ्वीराज—पृथ्वीराज उसे बाँधकर अपनी प्रियतमा के चरणो मे डाल देगा। तुम्हारा जी चाहे तो उसकी अपवित्र काया के टुकडे-टुकडे कर डालना।

तारा—तारा राजपूत बाला है, कसाई नही। पराजित और असहाय शत्रु पर वह प्रहार नही करेगी। युद्ध-भूमि मे उससे लोहा लेगी। सिंह-वाहिनी चडी के समान रिपु-दल का सहार करेगी। वह विजय-दुदुभी बजाती हुई टोडा दुर्ग मे प्रवेश करेगी और पिताजी की इस व्यथा को दूर करेगी कि वह पुत्रहीन है।

पृथ्वीराज—धन्य हो तारे, तुम सचमुच ही दुर्गा हो। तुम्हारे इस विकट अनुष्ठान मे पृथ्वीराज तुम्हारा अनुचर बनकर साथ देगा। ससार की कोई शक्ति अब लालपठान की रक्षा नही कर सकती।

तारा—मुझे विश्वास है, राजकुमार, हमारी साधना सफल होगी, किन्तु कार्य सरल नही है। टोडा दुर्ग छोटा होते हुए भी सुदृढ और दुर्गम है। लालपठान के पास सुशिक्षित एव सुसचालित सेना है। मालवा और गुजरात के सुलतान उसके सहायक है।

पृथ्वीराज—किन्तु मेवाड की शक्ति

तारा—(पृथ्वीराज को वाक्य पूरा न करने देकर) मेवाड अभी-अभी दिल्ली-पति से संघर्ष ले चुका है। अभी तो मेवाडी सैनिको के घाव भी नही भर पाए होगे। उन्हे फिर नये संघर्ष की ज्वाला मे झोक देना उचित नही होगा। गत सुल्तान और लालपठान का संघर्ष

मेवाड और मालवा-गुजरात के युद्ध मे परिणित नही होने देना चाहिये। पिताजी ने निराशा की घडियो मे महाराणाजी की शरण मे जाने की इच्छा प्रकट की भी थी, किन्तु मैने ही उन्हे रोका है।

पृथ्वीराज—मेवाड़ के हित का इतना ध्यान है तुम्हे ?

तारा—क्यो न हो, मेवाड भारत के भाग्याकाश का रवि है। आये दिन विदेशी शक्तियो का राहु उसे ग्रसने का यत्न करता है, किन्तु अन्त में उसके तेज के सम्मुख ठहर नही पाता। तारा सीसोदिया राजवश के गौरव-रवि के खग्रास का कारण नही बनेगी।

पृथ्वीराज—जो तुम्हारी इच्छा, तारा, मेवाड की सेना को तुम स्वीकार न करो, किन्तु पृथ्वीराज को अपनी सेना का एक सैनिक समझकर तो साथ लोगी। तारा रूपी दुर्गा के साथ पृथ्वीराज शकर की भांति ताण्डव करना चाहता है।

तारा—ताण्डव का समय आने दो राजकुमार, आप मेरे दाहिने हाथ पर सहार का खेल खेलोगे तो मैं भी सहस्र गुणा बल अपने प्राणो मे अनुभव करूँगी, किन्तु मेरी इच्छा है कि हमारे इस प्रलयकर खेल का न तो मेरे पिताजी को पता चले न महाराणा जी को।

पृथ्वीराज—तुम्हारे आदेश का पालन होगा। किन्तु एक प्रार्थना मेरी है कि इस प्रकार जगलो में भटकने के बजाय राव सूरतान चित्तौड के राजमहल का आतिथ्य स्वीकार करें।

तारा—राव सूरतान को आमंत्रित कर रहे हो, तारा को नही ? (मुस्कराती हुई)

पृथ्वीराज—जिसने मेरे प्राणो मे घर बसा लिया, उसे क्या आमत्रण की प्रतीक्षा करनी होगी ?

(ऐसा कहते हुए पृथ्वीराज तारा का हाथ पकड़ लेता है।)

तारा—(हाथ छुड़ाते हुए) नही राजकुमार, प्रीति की इस गंगा को अभी

महाराणा रायमल–किन्तु राजयोगीजी, मेवाड तो रक्त के समुद्र मे मानो डूब ही जायेगा।

राजयोगी–आपके मन की आशका को मै समझता हूँ, महाराणाजी। मुझे भय था कि महाराणाजी रात-दिन के सग्राम से ऊब न गये हो, पुत्र के वियोग ने उन्हे राज-काज के प्रति उदासीन न कर दिया हो, इसलिये भवानी की आज्ञा से मुझे आना ही पडा। शत्रु सुअवसर पाकर घात करने वाला है। कुछ ही दिनो मे टिड्डी दल की भाँति रिपु-सेना आक्रमण करेगी। हमे शत्रु के मेवाड भूमि में पदार्पण करने की प्रतीक्षा नही करनी चाहिये। आक्रमण करने वाले पर उसके घर मे जाकर स्वय आक्रमण करना चाहिये।

शृगारदेवी–जब हमारे सारे पुत्र हमसे छिन गये है, तब सूरजमल्ल को ही हम अपना पुत्र मान ले तो हर्ज क्या है ?

राजयोगी–वैसे तो मेवाड की सारी प्रजा महाराणाजी की सतान है। महाराणा जिसे भी चाहे अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर सकते है, किन्तु सूरजमल्ल ने मेवाड भूमि को विदेशियो से पद-मर्दित कराने का प्रयत्न किया है। ऐसे व्यक्ति पर प्रजा की श्रद्धा कैसे होगी ? राजा ऐसा होना चाहिये जिस पर प्रजा श्रद्धा कर सके। मेवाड की प्रजा पथ-भ्रष्ट, विवेकहीन, अभिमानी व्यक्ति को अपना भाग्य-विधाता मानने को प्रस्तुत नही है। सूरजमल को देशद्रोह का दड देना आवश्यक है। जो महाराणा अपने पुत्र जयमल्ल के यौवन के थोडे-से पथ विचलित होने को क्षमा नही कर सके वह क्या सूरजमल्ल को क्षमा कर देगे ?

महाराणा रायमल–नही राजयोगीजी, मै उसे अवश्य दड दूंगा, किन्तु एक बात है कि दडदाता मे दड देने की शक्ति होनी चाहिये। मेवाड की शक्ति का क्या हाल है, यह तो आप जानते ही है। नाम बडे और दर्शन थोडे वाली बात है। पृथ्वीराज के स्वर्गवास

ने उसकी कमर ही तोड डाली है।

राजयोगी–महाराणाजी, देश की शक्ति उसका राजा अथवा राजकुमार नही है, देश की शक्ति उसकी प्रजा है। मेवाड़ की प्रजा आज भी अपने पिता सदृश महाराणा एव अपने देश के स्वाभिमान की रक्षा के लिये जाग्रत है। वह परदेशी शक्तियो से गठ-बंधन करने वाले देश-द्रोहियो को दड देने मे समर्थ है।

महाराणा रायमल–किन्तु, राजयोगीजी, क्या युद्ध की विभीषिका मे अपनी प्यारी प्रजा को झोक देना उचित होगा ? सहस्रों सैनिको की जाने लुटाने की अपेक्षा अपने अहम् को थोड़ा-सा झुक जाने देकर, सधि करली जाये तो क्या प्रजा को कोई आपत्ति होगी ?

राजयोगी–अवश्य होगी, ऐसी स्थिति में प्रजा विद्रोह करेगी।

शृंगारदेवी–और उसका नेतृत्व राजयोगी करेगे।

राजयोगी–प्रजा की आज्ञा होने पर ! किन्तु मेरा विश्वास है ऐसी परिस्थिति उत्पन्न नही होगी। मेवाड विपरीत परिस्थितियो मे पडकर भी साहस नही छोडता। कभी स्वाभिमान के विपरीत शत्रु से सधि नही करता। समय पर उसे कभी नेतृत्व का अभाव भी अनुभव नही हुआ। एक नही सहस्र पृथ्वीराज प्रजा मे से ही प्रकट हो जायेगे। महाराणाजी, आप विश्वास को न छोड़िये।

महाराणा रायमल–आपने मेरे असमंजस को दूर कर दिया है। दुविधा के सारे बादल दूर हो गये हैं। महाराणा रायमल के हृदय मे बसने वाला पिता भले ही आज अपने सभी पुत्रों के वियोग से व्याकुल हो, किन्तु उसकी यह व्याकुलता उसको कर्तव्य-पथ से विमुख नहीं कर सकेगी। सूरजमल के आगे अथवा विदेशी सत्ताओं के सम्मुख मस्तक टेकने की कायरता रायमल स्वप्न मे भी नहीं करेगा। किन्तु फिर भी उसके मन मे इस बार मेवाड

राजयोगी–महाराणाजी, कर्तव्य करना मनुष्य का धर्म है, फल की उसे चिन्ता नही करनी चाहिये। किन्तु मै आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मेवाड की ध्वजा इस वार भी झुकेगी नही। मेवाड की शक्ति को उसके वास्तविक रूप मे देखने का अवसर महाराणाजी को प्राप्त होगा। मेरे साथ मेवाड की प्रजा के कुछ प्रतिनिधि आपके दर्शन के लिये आये है। अच्छा हो कि आप उन्हे दर्शन देने की कृपा करे।

महाराणा रायमल–अच्छी वात है, आप उन्हे मत्रणा-गृह मे लाइये। मै भी वहाँ पहुँचता हूँ।

(सवका प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन)

सातवाँ दृश्य

(स्थान—माडू एव चित्ताडगढ के मध्य एक पहाड़ी मार्ग। समय—सध्या। सूरजमल और ज्वाला का प्रवेश। सूरजमल समर-भूमि में जाने वाले योद्धा के उपयुक्त सशस्त्र अवस्था में है और ज्वाला के हाथ में नंगी तलवार है।)

ज्वाला—दादा भाई, हमे यही ठहरना चाहिये। मैंने यमुना को इसी स्थान पर मिलने का आदेश दिया है।

सूरजमल—किन्तु वह गई कहाँ है ?

ज्वाला—चित्तौड।

सूरजमल—किन्तु चित्तौडगढ मे वह जा भी कैसे सकेगी ?

ज्वाला—क्यो ? जाने मे क्या बाधा है ? महाराणा कुभा के काल से चित्तौडगढ के द्वार बन्द नही किये जाते, यह तो तुम जानते हो; वह कहते थे कि चित्तौड का एक द्वार दिल्ली है, दूसरा माडू और तीसरा गुजरात। महाराणा रायमल अपने पिताओ की परम्परा का पालन करते है।

सूरजमल—किन्तु इसका अर्थ यह नही है कि युद्ध-काल मे भी मेवाड चित्तौड दुर्ग मे आने-जाने वाले व्यक्तियो के प्रति सावधान नही रहता। महाराणा कुभा के कथन का अर्थ केवल इतना है कि मेवाडी वीर चित्तौड के दुर्ग मे बन्द रहकर रक्षात्मक युद्ध करना पसन्द नही करते। शत्रु की सीमा में प्रवेश कर आक्रमणात्मक युद्ध करना ही उनके प्राणो को प्रिय है।

ज्वाला—प्रिय भी है और अनुकूल भी ?

सूरजमल—अनुकूल भी, क्योंकि शत्रु के प्रदेश मे घुसकर युद्ध करने वाला राजा अपनी प्रजा को युद्ध-ज्वाला की लपटो से बचा लेता

है। दो भैसो के युद्ध मे बाड का चुरकन वाली कहावत के अनुसार समर-क्षेत्र के आसपास के प्रदेश को भी विध्वस का शिकार होना पडता है।

ज्वाला–यह तो ठीक है, किन्तु प्रश्न यह है कि महाराणा रायमल अब आक्रमणात्मक युद्ध कर सकने में समर्थ भी है या नही ? मेवाडी रक्त-बीज के वशज तो है नही कि उनके रक्त-बिन्दु से नवीन योद्धा तुरन्त जन्म लेकर खडा हो जाय। शताब्दियो से एक क्षण के लिये भी मेवाडी योद्धाओ को विश्राम करने का सुअवसर प्राप्त नही हुआ। आये दिन सहस्रो मेवाडी सेनानियो को समर-भूमि मे चिर निद्रा मे लीन होना पडा है। इस समय महाराणा की सैनिक शक्ति सीमित है। अत मैं समझती हूँ, वह दुर्ग मे रहकर ही युद्ध करना उचित समझेंगे।

सूरजमल–मै भी यही समझता हूँ सभवत महाराणाजी विवश होकर अपने आवेश पर सयम रखेगे। मुट्ठी भर वीर सैनिको को खुले मैदान मे ले जाकर, अपनी अपेक्षा कई गुनी अधिक सेना से भिडाकर आत्मघाती नीति का पालन नही करेगे। वार्धक्य एव जीवन-व्यापी सघर्षो ने उनके शरीर को जीर्ण भले ही किया हो, किन्तु उन्हे सतर्क तो बनाया ही है। मुझे भय है कि वास्तव मे महाराणा जी दुर्ग मे रहकर ही युद्ध करेगे तो हमारे लिये बडी कठिन समस्या खडी हो जायगी।

ज्वाला–ऐसा क्यो कहते हो ?

सूरजमल–क्योकि चित्तौड दुर्ग साधारण दुर्ग नही है। अलाउद्दीन जैसे अद्भुत साहसी, अनुपम रण-कुशल, अपार सैनिक शक्ति से सम्पन्न व्यक्ति को चित्तौड दुर्ग पर विजय पाना टेढी खीर हो गया था। माडू के इन आधे मन से लडने वाले सैनिको के बल पर क्या हम गढ मे प्रवेश पा सकेंगे ? गढ मे प्रवेश पाने का एक-

मात्र उपाय दीर्घकाल तक उसे घेरे रहना है, ताकि शत्रु को जीवन की आवश्यक वस्तुओ का अभाव होने पर दुर्ग के द्वार खोलने पडे। किन्तु माण्डू के सुलतान हमारे लिये सुदीर्घ काल तक लडते रहने का धैर्य एव उदारता दिखा सकेगे, इसमें मुझे सन्देह है।

ज्वाला–दादा भाई, आपका सन्देह ठीक है, किन्तु मैं समझती हूँ हमे अधिक काल तक दुर्ग पर घेरा डालना नही पडेगा।

सूरजमल–ऐसा तू क्यो समझती है ?

ज्वाला–क्योकि मै ऐसा उपाय करना चाहती हूँ, जिससे मेवाड दुर्ग की खाद्य सामग्री शीघ्र से शीघ्र नष्ट हो जाय और मेवाडी सेना को बाहर आकर लडना पडे।

सूरजमल–क्या उपाय है वह ?

ज्वाला–वही उपाय करने तो यमुना गई है। सिरोही-नरेश भी मेवाड की ओर से लडने के लिये चित्तौड पहुँचे है।

सूरजमल–क्या पृथ्वीराज को विष देकर छलपूर्वक मारने वाले सिरोही-नरेश को महाराणा ने क्षमा कर दिया ?

ज्वाला–हाँ, अपने पुत्र के हत्यारे को क्षमा माँगने पर महाराणा ने अभय-दान प्रदान कर दिया है, क्योकि उसके प्राण लेने का अर्थ अपनी पुत्री को विधवा बनाना था। वह भी कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिये अपनी सेना-सहित चित्तौड जा पहुँचा है। मुझे विश्वास है, समय पर वह हमारा कार्य सफल कर देगा।

सूरजमल–किन्तु यह तो सरासर धोखा है। इस प्रकार छल और प्रपच से हमने मेवाड पर विजय पाई तो उससे हमारे मन को क्या सन्तोष होगा ? नही ज्वाला, ये ओछे हथियार अपने ही तरकस में रख। सूरजमल इनका प्रयोग नही होने देगा।

ज्वाला–दादा भाई, रण में किसी भी साधन का उपयोग कर लेना

अनुचित नही। यदि आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को स
वनाने के आयोजन मे हम राजपूतो जैसी धर्म-युद्ध करने
मूर्खता की होती, तो क्या नद जैसे सर्वसाधन सम्पन्न शक्तिश
सम्राट् से वह विजय पा सकते थे ? इतिहास ने न तो चन्द्र
की निन्दा की, न चाणक्य की। अत सूरजमल को चन्द्रगुप
पद-चिह्नो पर चलने मे कोई आपत्ति नही होनी चाहिये। तु
जीवन का एकमात्र लक्ष्य मेवाड के राज्य को हस्तगत क
होना चाहिये।

(एक सशस्त्र भील के रूप में सग्रामसिह प्रवेश करता है। उसकी कमर में तलवार बँधी है। पीठ पर तूणीर है। एक हाथ में धनुष और दूसरे में वाण है।)

सग्रामसिह—(पहचाने जाने से वचने के लिये कृत्रिम स्वर में) सचमुच एक विडम्वना है कि एक गहलोत राजकुमार, वीरभूमि मे का सपूत विदेशी अत्याचारियो को अपनी माँ के वक्षस्थर रौंदने के लिये आमन्त्रित करता है और अपनी माँ के अपमा प्रसन्न होता है।

सूरजमल—कौन है तू ?

सग्रामसिह—(कृत्रिम स्वर में) एक भील। आपकी भाँति ही मेवा एक पुत्र।

ज्वाला—किन्तु किसी वन-पुत्र को गहलोत राजवश के पारस्परिक स के वीच पडने का दुस्साहस नही करना चाहिये।

सग्रामसिह—(कृत्रिम स्वर में) क्यो नही करना चाहिये ? जव राज के पारस्परिक सघर्ष का दुष्परिणाम राज्य की प्रजा के ज पर प्रभाव डालता है, तव प्रत्येक प्रजाजन को अपने हि दृष्टि से उस सघर्ष मे भाग लेना आवश्यक हो जाता है, तिस भीलो का मेवाड के राजवश पर विशेष अधिकार है। भील

सहायता से ही वीरवर बाप्पारावल ने चित्तौड़ के देशद्रोही मान-सिंह मौर्य के मस्तक से राजमुकुट छीनकर अपने मस्तक पर रखा था। एक भील ने ही गहलोत के आदि पुरुष का राजतिलक अपने अँगूठे के खून से किया था और अब भी उसके वंशज मेवाड़ के महाराणाओं का राजतिलक अपने अँगूठे के रक्त से करने की परम्परा का पालन करते हैं। याद रखो पदभ्रष्ट राजकुमार, भीलों के रक्त की जिस पर कृपा होगी, मेवाड़ का राजमुकुट उसी के मस्तक पर होगा।

ज्वाला–भगवान् राम के वंशज गहलोतों का रक्त वन-पुत्र भीलों के अपवित्र रक्त की कृपा नहीं चाहता।

संग्रामसिंह–(कृत्रिम स्वर में) क्योंकि उसे विदेशियों के रक्त से अधिक ममता हो गई है, जो अपने अँगूठे के रक्त से नहीं, अपितु अपनी तलवार पर लगे हुए गहलोत-रक्त से ही गहलोत-राजपुत्र का अभिषेक करने की साध रखते हैं, और चाहते हैं कि बाप्पारावल के मस्तक पर गौरवान्वित होने वाला राजमुकुट उनके चरणों का स्पर्श करे।

सूरजमल–चाण्डाल भील युवक, गहलोत वंश का राजकुमार सूरजमल मेवाड़ के राजमुकुट की प्रतिष्ठा रखने के लिये अपने प्राणों की बाजी लगा देगा, भले ही राजमुकुट उसके सिर पर रहे अथवा किसी दूसरे गहलोत के।

(संग्रामसिंह अपने चेहरे से नकली दाढ़ी-मूछें अलग करता है एवं स्वाभाविक स्वर में बोलता है।)

संग्रामसिंह–जिओ दादा भाई! मैं तुम्हारे मुँह से यही वीरता और उदारता से भरे हुए शब्द सुनना चाहता था। याद रखो, तुम राजपूत हो, भगवान् राम के वंशज हो, तुम्हारे मुँह से जो शब्द उच्चारित हुए हैं, अब उनका मान रखना तुम्हारे लिये आव-

श्यक है ।

ज्वाला–(साश्चर्य) कौन, दादा भाई सग्रामसिह !

सूरजमल–भैया सग्रामसिह !

(यह कहते हुए सूरजमल सग्रामसिह को गले लगा लेता है। दोनो की आंखो में प्रेमाश्रु प्रवाहित होते हैं और कुछ देर दोनो कुछ नहीं बोल पाते । इसी समय एक भीलनी के वेश में यमुना आती है जिसके सिर पर बेरो से भरी हुई एक टोकरी है ।)

यमुना–बेर ले लो, रानी जी ! मेवाड के जगलो के बेर। मेवाड की बेरियो की झाडी के नीचे सिह रहते है, रानीजी ! इसलिये समझ लो कैसी विपत्ति के मुंह मे पाँव रखकर ये बेर लाने पडते हैं ।

(ज्वाला आंखो ही आंखो में यमुना को सग्रामसिह और सूरजमल से अलग चलने का सकेत करती है ।)

ज्वाला–(यमुना से) बडी आई बेर वाली, निकल यहाँ से, नही तो, (तलवार दिखाती है ।)

यमुना–बाप रे, नारी है या नागिन !

(भय का नाट्य करती हुई यमुना प्रस्थान करती है और ज्वाला तलवार ताने हुए उसके पीछे जाती है, किन्तु कुछ क्षणो के पश्चात् ही लौट आती है, मानो यमुना को कुछ आदेश देने के लिये गई हो । इस बीच सूरजमल और सग्रामसिह भी प्रकृतिस्थ होकर आलिगन से मुक्त होते हैं ।)

सूरजमल–मुझे तो इस बात का विश्वास था कि एक दिन तुम प्रकट होगे ।

ज्वाला–राजमुकुट के मोह को प्राणो मे दबाये हुए कब तक बैठे रहते । सुअवसर जानकर प्रकट हो ही गये ।

सग्रामसिह–ज्वाला, इतने दिनो बाद हम मिले है, फिर भी तू बिच्छू की भांति डक मारती है ?

ज्वाला—दादा भाई, ज्वाला तुम्हारी तरह चेहरा नही वदलती। वह भीतर-वाहर एक है। मुँह मे राम वगल मे छुरी वाली कहावत चरितार्थ नही करती। तुम्हारी तरह त्याग का ढोग नही करना चाहती और न दादा भाई सूरजमल को करने देगी। समझते हो कि दो मीठी वातें वनाकर भोले भाई को ठग लोगे।

संग्रामसिंह—ज्वाला, अभी तो संग्रामसिंह ने न प्रेम की वात की है, न संग्राम की। वरसो से विछड़े वन्धु स्वभाववश रक्त के आग्रह से प्रेमालिंगन मे वँध गये। आँसुओ मे उनके मन की व्यथा वह चली। कदाचित तुझे यह नही भाया, किन्तु इसमे हमारा क्या वश है? प्रकृति ने अपना काम किया। प्रकृति कहती है, भाई का नाता गले मिलने के लिये है, परस्पर तलवारे तानने के लिये नही। किसलिये तुम मेवाड की छाती पर विदेशी सेना का ताण्डव कराना चाहती हो?

ज्वाला—तव तुम वन्द करा दो इस ताण्डव को।

संग्रामसिंह—कैसे?

ज्वाला—न्याय को आदर दिलाकर! जिन्होने मेरा अपमान किया है उन्हे दंडित करने का मुझे अवसर देकर एव सूरजमल का मेवाड़ की गद्दी पर न्यायपूर्ण एव स्वाभाविक अधिकार स्वीकार कर।

संग्रामसिंह—वहन, तेरा किसने अपमान किया है और किस प्रकार किया है, यह तो मै नही जानता, किन्तु मान लेता हूँ कि मेवाड़ के राजमहल मे किसी ने तेरा अपमान कर दिया होगा, फिर भी तुझे सोचना चाहिये कि व्यक्तियो का वदला देश से नही लिया जाता। खिसियानी विल्ली खभा नोचे वाली कहावत चरितार्थ न कर। व्यक्ति का वदला समाज से न ले।

ज्वाला—किन्तु व्यक्ति समाज का प्रतिनिधि है। जिन उद्धत नारियो ने मेरा अपमान किया है, वे राजपूतो के उच्च कुल एवं पवित्रता

के दम्भ का प्रतिनिधित्व करती है। उनका अनाचार व्यक्तिगत दोप नही है। उनके कार्य मे सम्पूर्ण समाज की अनुदारता एव मकीर्णता प्रतिध्वनित हुई है। अत मेरा क्रोध सम्पूर्ण समाज पर है। मै तलवार की नोक से मेवाड की प्रत्येक क्षत्राणी के वक्षस्थल मे लिख देना चाहती हूँ कि ज्वाला का जीवन उनके जीवन से कम पवित्र नही है।

सग्रामसिह–बहन, मानता हूँ, तू तलवार की नोक से मेवाड की क्षत्राणियो का हृदय विदीर्ण कर डालेगी, किन्तु मुझे सन्देह है कि तू उनके मस्तिष्क मे जो लिखना चाहती है वह लिख सकने मे सफल हो सकेगी। (मस्तक में अथवा हृदय में लिखने के लिये तलवार रूपी लेखनी वेकार सिद्ध होती है, वहाँ तो उदारता-भरी चितवन और प्रेम-भरी वाणी ही सफल हो सकती है।)

सूरजमल–सग्रामसिह, राजपूत तो केवल तलवार की वाणी मे बोलना जानता है।

सग्रामसिह–ठीक है, तलवार के धनी वीर भी कहलाते है, तलवार का पानी तकदीरे बनाता और बिगाडता है। बहुत ताकत है तलवार मे। लेकिन याद रखो, तलवार को म्यान मे रखने की ताकत किसी महा बलवान् आत्मा वाले महापुरुष को ही प्राप्त होती है। दादा भाई, मै तुममे वह बल भी देखना चाहता हूँ।

ज्वाला–स्वय अपने आप मे नही ?

सग्रामसिह–ज्वाला, सग्रामसिह ने अपनी तलवार की ताकत पर बहुत सयम रखा है। उसे खेद है कि क्यो नही वह इससे पहले ही रग-मच पर आया।

ज्वाला–क्योंकि उसे अपने सभी भाइयो के लडकर समाप्त हो जाने की प्रतीक्षा थी।

सग्रामसिह–नही। उसमे उस समय भाइयो के रणोन्माद को दूर करने

की शक्ति नही थी। वह स्वयं युद्ध को रोक नही सकता था। प्रेम और विश्वास पाने के लिये कभी-कभी शक्ति का सचय करना आवश्यक होता है। दुर्बल व्यक्ति प्रेम भी नही पा सकता और न विश्वास। आलिगन करने के लिये भी भुजाओ मे ताकत चाहिये। पहले सग्रामसिंह मे प्रेमालिगन करने की शक्ति भी नही थी। किन्तु आज अपने भाई को गले लगाने का सामर्थ्य उसमे है। आज उसकी भुजाओ मे आलिगन करने का बल है।

(यमुना का कुछ सैनिको सहित प्रवेश)

ज्वाला–किन्तु ज्वाला और सूरजमल के सकल्प के मध्य जो भुजायें आडे आवेगी उन्हे काट डाला जायगा। (आगत सैनिको से) बाँध लो इन्हे।

संग्रामसिंह–(हाथ बढाता हुआ अट्टहास करता है।) हः ह हः बाँधो मुझे। बहुत चतुर हो ज्वाला तुम। तुमने इन सैनिको को व्यर्थ ही बुलाया। राखी बाँधने वाले बहन के हाथ क्या भाई को बाँधने का बल नही रखते। मनुष्यो के हाथो मे बँध सकने की शक्ति सग्रामसिंह मे है। (सैनिको से) बाँधो मुझे। अपनी स्वामिनी की आज्ञा का आदर करो।

(सैनिक सग्रामसिंह की ओर बढते है, इसी समय तारा और राजयोगी प्रवेश करते है जिनके साथ सशस्त्र सैनिक है जो यमुना के साथ आये सैनिको से सख्या मे बहुत अधिक है। यमुना के साथ आये हुए सैनिक हतप्रभ हो जाते हैं।)

तारा–ज्वाला, सग्रामसिंह को बाँध सकने की शक्ति तुममे या सूरजमल में नही है। सूरजमलजी रावण की भाँति तप करके बीस मस्तक वाले बन जाँय तब भी सग्रामसिंह का बाल बाँका नही कर सकते। (अपने सैनिको से) बाँध लो इन्हे।

(संग्रामसिंह की ओर बढने वाले सैनिको की ओर उँगली

उठाती है।)

सग्रामसिह–नही, इन बेचारो का क्या वश ? इन्हे जाने दो।

(ज्वाला के सैनिक साश्चर्य सग्रामसिंह की ओर देखते हैं फिर ज्वाला एव सूरजमल की ओर। ज्वाला यमुना को आंखो ही आंखो में जाने का इशारा करती है।)

सग्रामसिंह–(यमुना से) ले जाओ अपने साथियो को।

(यमुना एव उसके साथी जाते है।)

तारा–(अपने सैनिको से) तुम भी जाओ और देखो ये विश्वास-घात करने पावे।

(तारा और राजयोगी के साथ आए हुए सैनिक भी प्रस्थान करते हैं। ज्वाला भी जाना चाहती है किंतु राजयोगी रोकते है।)

राजयोगी–यह मत समझ ज्वाला कि मेवाड सो रहा है। उधर दे उस पहाडी पर वास्तविक शक्ति के दर्शन कर। सहस्रो धनुध वीर भील योद्धा मालवा के सुलतान की सेना का स्वागत क को प्रस्तुत है।

सूरजमल–तो सिह जाल मे फँस गया है ?

सग्रामसिंह–इसका अफसोस न करो दादा भाई ! सग्रामसिंह राज परम्परा का पालन करेगा। सूरजमल की उदारता भी उसने दे है, जब युद्ध-काल मे रात्रि के समय पृथ्वीराज उनसे मिलने था। ऐसे विशाल हृदय भाई पर सग्रामसिंह ओछा वार करेगा। तुम चाहो तो अपने शिविर मे लौट जाओ।

सूरजमल–मुझ पर दया करोगे ?

सग्रामसिंह–नही तुम्हारी इज्जत करूँगा। छोटा भाई होने के अपने कर्तव्य का पालन करूँगा। सग्रामसिंह अधर्म युद्ध करेगा। उसमे सग्राम करने की शक्ति है, इसका यह अर्थ नही कि वह कसाई बन जायगा। मेरी तरफ से तुम्हे अपने शि

मे लौट जाने एव कल प्रात: युद्ध-भूमि मे तलवारे मिलाने की छूट है।

ज्वाला–दादा भाई, यदि आपके हृदय मे अपने बडे भाई के लिए आदर है तो क्यो नही महाराणाजी को तैयार करते कि वह ऊदाजी के पुत्र को ही युवराज मान ले। महाराणा अजयसिहजी ने भी तो अपने पुत्रो के स्थान पर अपने बड़े भाई के पुत्र हमीर को युवराज घोषित किया था।

सग्रामसिह–इसमे मुझे कब आपत्ति रही है ?

राजयोगी–हाँ, सग्रामसिह को कोई आपत्ति नही रही है, लेकिन उसे आपत्ति न करने का अधिकार नही है। राजमुकुट तो प्रजा के विश्वास का प्रतीक है, जिसपर प्रजा का विश्वास हो, उसे ही राजमुकुट शोभा देता है। यदि तुम विश्वास करते हो कि मेवाड की प्रजा का तुम पर विश्वास है, उससे अधिक जितना सग्रामसिह पर है, तो बडी खुशी से तुम मेवाड के युवराज बन सकते हो।

ज्वाला–प्रजा की इच्छा का यहाँ कोई प्रश्न नही है राजयोगीजी, प्रजा को तो राजा का अनुगमन करना होता है।

तारा–ऐसा ही भ्रात विचार एक दिन ऊदाजी के मन मे उठा था।

सग्रामसिह–दादा भाई, मेवाड़ के राजमुकुट का सचमुच सग्रामसिह को मोह नही है। और सच पूछा जाय तो मेवाड़ के महाराणा को कभी राजा होने का, प्रजा का स्वामी होने का, ऐश्वर्य और वैभव के उपभोग के अधिकारी होने का गर्व करना ही नही चाहिये, क्योकि वह तो राजा नही, एकलिग का दीवान मात्र है। गहलोत वंश के राजपुत्र ही क्या, प्रत्येक मेवाडी, यहाँ तक कि वनो मे निवास करने वाला प्रत्येक भील भी मेवाड राज्य का समान रूप से स्वामी है।

राजयोगी–प्रजा चाहे जिसके मस्तक पर राजमुकुट रख दे। राजवश

के व्यक्तियो को इसमे आपत्ति ही क्यो होनी चाहिये। देखो सूरजमल, उधर आकाश मे मालवा की सेना के आने से जो धूल के बादल बने है, उन्हे अस्तगत सूर्य की किरणो ने लाल कर दिया है। क्या तुम मेवाड की भूमि को ऐसी ही लाल-लाल करते रहना चाहते हो ?

तारा–ज्वाला, तुम भी सोचो, जिस देश की स्वाधीनता की रक्षा के लिये शताब्दियो से मेवाडी वीर मस्तक चढाते आये है, जिस देश का सम्मान रखने के लिये महासती पद्मिनी और उनके साथ सहस्रो वीरागनाओ ने जीते-जी जाज्वल्यमान जौहर की ज्वाला मे जीवन की आहुतियाँ दी है, उसे एक व्यक्ति के अपमान का प्रतिशोध लेने के लिये, विदेशियो का माडलिक बना दिया जाय, क्या यह उचित है ? उसे एक व्यक्ति मुकुट के मोह मे पडकर विदेशियो द्वारा पद-मर्दित कराये, क्या यह उचित है ?

ज्वाला–तो तुम लोग चाहते हो कि हम हार मान ले।

सग्रामसिह–जब हमारे बीच लडाई ही नही है, तो हार-जीत का प्रश्न उठना ही नही है। सग्रामसिह का शत्रु सूरजमल नही है और सूरजमल का शत्रु सग्रामसिह नही और मेवाड से तो दोनो की शत्रुता नही है। कम से कम देश के नाम पर हमे एक हो जाना चाहिये। कर्तव्य हमे पुकार रहा है। भारत पर विदेशियो की गृद्ध-दृष्टि लगी हुई है। वे इसे नोच खाने की घात मे है। हमारी धमनियो मे रक्त है, रक्त मे मनुष्यता, वीरता और देश-प्रेम है, तो हमे अपनी शक्ति देश के वास्तविक शत्रुओ से लोहा लेने मे लगानी चाहिये।

तारा–हमे केवल सत्ता-लोलुप विदेशी शक्तियो से ही नही लडना है, बल्कि अपनी उन सकीर्णताओ एव कुसस्कारो से भी लडना है जो ज्वाला जैसी तेजस्विनी और चिरपवित्र नारियो का अपमान

करने का दुस्साहस करते है, हमे मनुष्य-मनुष्य के बीच की दीवारे गिरानी है।)

राजयोगी–दीवारे गिरानी है। मेवाड के जन-साधारण के मन मे भी अपने देश के प्रति उतनी ही ममता जाग्रत करनी है, जितनी गहलोत राजवश के मन में है। भील और राजपूत एव सभी अन्य जन-साधारण को एक ध्वजा के नीचे भाई-भाई की तरह एकत्रित करना है।

सग्रामसिह–(ज्वाला से) तुम असाधारण नारी हो। तुममे महान् शक्ति है, यह तुमने प्रदर्शित कर दिया है। इतने दिन तुमने भ्रातिवश विध्वस की शक्ति प्रदर्शित की। अब निर्माण की शक्ति दिखाओ। मेवाड राजकुल का मान रखने के लिये जिसने अपने पिता से विद्रोह किया, क्या वह साधारण नारी है। क्यों तुम अपने गौरव-मय पद को स्वय गँवाती हो। सोचो वहन, इतिहास तुम्हारे लिये क्या कहेगा ?

राजयोगी–(ज्वाला के मस्तक पर हाथ रखकर) वेटी, तुमको कव से भवा अपने मन्दिर मे वुला रही है। तुम तो नित्य उसके मन्दिर मे पू करने आती थी। भवानी को इस बात का दुख है कि तुम दै के दल मे जा मिली हो। वह दैत्यो पर शस्त्र चलाने मे सक नही करती, किन्तु तुमने तो कितनी ही वार भक्ति से गद् होकर अपने आँसुओ का हार उसे पहनाया है। वह तुम्हारे रूप को नही भूल पाती। वह तुम पर शस्त्र कैसे उठावे। कितने काल से निरन्तर उसके हृदय पर प्रहार कर रही हो, उ तुम्हारे प्रहार वात्सल्यमयी क्षमाशील माँ की भाँति सहे है अ सह सकने की उसमे शक्ति है। मेवाड पर प्रहार करना भव के हृदय पर प्रहार करना है। वेटी। वोलो, कव तक तुम भवानी से विद्रोह करती रहोगी।

ज्वाला—यदि सत्व और सम्मान की रक्षा करने का यत्न करना भवानी के आदेश के विरुद्ध है, तव तो ज्वाला भवानी से भी विद्रोह करेगी। स्वय भवानी मेवाड की वर्तमान अन्यायी राजसत्ता के पक्ष मे युद्ध करने आवे तव भी ज्वाला युद्ध से विमुख नही होगी।

सग्रामसिह—दादा भाई, तुम क्या कहते हो ?

सूरजमल—मेरा मस्तक काटकर भवानी के चरणो पर चढा दो !

सग्रामसिह—किन्तु मेवाड सूरजमल जी के सवल कन्धो पर अवस्थित सजीव उन्नत मस्तक की माँग करता है। उसे उनकी सबल सुदीर्घ भुजाओ की चाह है जो हाथो मे खड्ग धारणकर मेवाड के शत्रुओ का हृदय विदीर्ण करती रहे।

सूरजमल—सग्रामसिह ! मेवाड की यह चाह तभी पूर्ण हो सकेगी जव सूरजमल के मस्तक पर मेवाड का राजमुकुट रखा जायगा। सूरजमल वार-वार मार्ग नही वदलता।

सग्रामसिह—मै तो कह चुका हूँ, सग्रामसिह दादा भाई की आकाक्षा के पथ मे नही आवेगा।

तारा—किन्तु मेवाड के महाराणा अथवा प्रजाजन देश-द्रोही को राजगद्दी के उत्तराधिकारी के रूप मे स्वीकार नही करेगे।

सूरजमल—सूरजमल की तलवार मे ताकत होगी तो वह मेवाड से अपनी वात मनवा लेगा।

तारा—ह ह मनवा लेगा। इस समय तो आपका जीवन भी हमारी दया पर निर्भर है। आपका यहाँ से अपने शिविर तक जा सकना भी असम्भव है।

ज्वाला—किन्तु हमे जीते जी वन्दी वनाने की शक्ति भी किसी मे नही है।

सग्रामसिह—किन्तु मै पहले ही कह चुका हूँ—सग्रामसिह क्षत्रित्व को

लज्जित नही करेगा। अपने भाई-वहनो को वन्दी वनाने अथवा उनका मस्तक काटने के लिये सग्रामसिह नही आया। आप लोग जा सकते है, अपने सहायको की छत्रछाया मे पहुँच सकते है।

(ज्वाला और सूरजमल साश्चर्य सग्रामसिह की ओर देखते है।)

सगामसिह–विश्वास नही होता मेरी वाणी पर ?

सूरजमल–विश्वास क्यो नही होता गहलोत वंश मे जन्म लेने वाला राजपूत किसी की पीठ पर आघात नही करेगा। अच्छी वात है, कल हमारी तलवारे मिलेगी। सम्भवत. यह सूरजमल के जीवन का अन्तिम युद्ध होगा। कल मेवाड के भाग्याकाश से गृह-कलह के वादल अन्तिम रक्त-वर्षा करके समाप्त हो जायेंगे। (ज्वाला से) चलो ज्वाला।

(ज्वाला और सूरजमल का प्रस्थान)

तारा–(सग्रामसिह से) किन्तु

सगामसिह–(तारा की वात काटकर) मे जानता हूँ तुम क्या कहना चाहती हो। शत्रु को मुट्ठी मे पाकर छोड देना मूर्खता है, लेकिन तारा, मै मेवाड की राजनीति को एक नये ही रास्ते पर ले जाना चाहता हूँ। कल सूरजमल और संग्रामसिह की तलवारे टकरायेगी और इसी टक्कर से जो विद्युत् प्रकाश होगा, उसी मे हमे स्नेह का मन्दिर दिखाई देगा। चलो, अव हमे भी शिविर पर चलना चाहिये।

(सव का प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन)

आठवाँ दृश्य

(स्थान—प्रथम अक के प्रथम दृश्य वाला। समय—सध्या। पर्दा उठता है तो महाराणा रायमल एव महारानी शृगारदेवी, दोनो रण-सज्जा सज्जित, कीर्ति-स्तम्भ के निकट खड़े दिखाई देते हैं।)

महाराणा रायमल–महारानी, अस्तोन्मुख दिवाकर की अन्तिम रश्मियो ने आकाश को लाल कर दिया है।

शृगारदेवी–जान पडता है सूर्यदेव ने आज आकाश-सुन्दरी की हलके नीले रग की चूनरी पर गहरा लाल रग डाला है।

महाराणा रायमल–शृगारदेवी, अद्भुत रगीन उपमा दी है तुमने। हाथो मे शस्त्र पकड लेने पर भी तुम्हारे जीवन की रगीनी समाप्त नही हुई।

शृगारदेवी–महाराणा जी, राठौर पुत्री एव गहलोत राजरानी शृगार-देवी को गहरा रग ही प्रिय है।

महाराणा रायमल–हाँ, कुसुवा का भी गहरा रग। नशे का भी गहरा रग।

शृगारदेवी–हाँ, दुख का भी गहरा रग, क्रोध का भी गहरा रग, सर्वनाश की ज्वाला का भी गहरा रग। उसने अपने हाथो मे तलवार भी पकडी है तो मेवाड भूमि को गहरे लाल रग से रग देने के लिये ही। मै तो युद्ध की रगीन घडी को तुरन्त निकट लाना चाहती हूँ। कब तक हम प्रतीक्षा करते रहेगे कि शत्रु चित्तौड पर घेरा डाले। हमे बढकर मैदान मे उससे लोहा लेना चाहिये।

महाराणा रायमल–मै भी प्राणो को प्रपीडित करने वाली प्रतीक्षा

की बेचैनी घडियो को समाप्त कर देना चाहता हूँ। अस्तोन्मुख भास्कर की भाँति भूमि और अम्बर को गहरे रक्तिम रग से रगकर मै ससार से अन्तर्धान हो जाना चाहता हूँ।

(दूर से आता हुआ शख, भेरी एव नगाडों का नाद सुनाई देता है।)

शृगारदेवी–सुना महाराणा जी, आपके स्वर मे स्वर मिलाकर दिशाएँ भी शख-नाद कर उठी है।

महाराणा रायमल–और इधर देखो, धूल का एक बादल-सा उठ रहा है।

शृंगारदेवी–जान पडता है, जोधपुर से राठौर सेना हमारी सहायता के लिये आ पहुँची है।

महाराणा रायमल–राठौर सेना ?

शृगारदेवी–हाँ महाराणा जी, मैने मेवाड की दुर्बल स्थिति देखकर जोधपुर सन्देश को भेजा था। जोधपुर के राठौरो और मेवाड के गहलोतो को सम्मिलित शक्ति मालवा के सुलतान के छक्के छुडा देगी। सिरोही नरेश भी अपने पाप का प्रायश्चित करने के लिये पहले ही सदलबल आ ही गये है।

महाराणा रायमल– यह सब ठीक है, फिर भी राजकुमारो के अभाव में मुझे ऐसा जान पड़ता है, मानो मेरी भुजाएँ कट गई है। राठौर सेना एव सिरोही की सेना को भी गिन ले, तब भी हमारी सेना शत्रु की विशाल वाहिनी के सम्मुख समुद्र की तुलना मे छोटी झील के समान है। निरन्तर युद्ध-रत रहने के कारण हमारे सैनिक समाप्त हो गये है।

शृगारदेवी–किन्तु फिर भी हमारी सेना मे आत्मविश्वास का अभाव नहीं है।

पूछता हूँ, इस पागलपन के साधन से क्या हम इस कीर्ति-स्तम्भ को स्थिर रख सकेंगे ? उस दिन लाल-लाल रक्त के रग से अनुरजित प्रभात था, जब तीनो राजकुमारो को मैने इसी कीर्ति-स्तम्भ के निकट एकत्रकर कहा था—इसकी आधार शिलाएँ काँप रही है। अदृश्य के कठोर हाथो ने राजकुमारो को हमसे छीन लिया। वे होते तो अपनी सबल भुजाओ द्वारा इस कीर्ति-स्तम्भ की रक्षा करते। अब तो मै एक सर्वनाशी ज्वाला को चित्तौड दुर्ग के भीतर और बाहर प्रज्वलित होते देख रहा हूँ।

(सहसा एक विस्फोट सुनाई देता है।)

शृगारदेवी—यह विस्फोट कैसा ? यह तो दुर्ग के भीतर ही हुआ जान पडता है। लो, धुएँ के काले-काले बादल उडकर आकाश को आच्छादित करने लगे।

महाराणा रायमल—धुएं के बादल ही नही छा रहे, अपितु ज्वाला की सर्वभक्षी सहस्रो जिह्वाएँ लपलपा उठी है। यह ज्वाला उधर प्रज्वलित हुई जान पडती है जिधर हमारा अन्न का भण्डार है।

शृगारदेवी—अर्थात् किसी व्यक्ति ने विश्वासघात किया है।

(शख, भेरी और नगाडो की ध्वनि एव घोडो के टापो की आवाज अधिक निकट आती है।)

महाराणा रायमल—सुनती हो, यह तुमुल नाद निकटतर आ रहा है। एक ओर आकाश को छूने वाली लपटे हमे अपनी गोद मे बिठा लेने को लालायित है, दूसरी ओर शत्रु-सेना का तुमुलनाद हमारे वक्षस्थल को विदीर्ण कर रहा है। महारानी, हमे राज-बलि देने को प्रस्तुत हो जाना चाहिये, जिसे तुम राठौरो की सेना समझती हो वह वास्तव मे शत्रु-सेना है।

शृगारदेवी—मालवा के सुलतान की सेना का आगमन शखनाद मे घोषित नही हो सकता, महाराणा जी !

महाराणा रायमल–किन्तु, सूरजमल तो शंख-नाद करता हुआ ही चित्तौड मे प्रवेश करेगा। आज असत्य के आगे सत्य, पाप के आगे पुण्य को पराजित होना ही पड़ा। जिस मेवाड़ भूमि की स्वाधीनता की रक्षा के लिये शताब्दियों से वीर योद्धाओं एवं वीरागनाओ ने प्राणो की आहुति दे दी है, उसे कुछ क्षुद्र और दम्भी मेवाड़ियो के दुराग्रह से विदेशियों द्वारा पद-दलित होना पडेगा। यह जय-नाद मेवाड के शत्रुओं का है।

(शंख-ध्वनि करते हुए राजयोगी का प्रवेश।)

राजयोगी–नही महाराणा जी, यह जयघोष मेवाडी योद्धाओं का ही है।

महाराणा रायमल–मेवाडी सेना को तो मैने गढ मे ही एकत्रित कर रखा है। अभी तो शत्रु का चित्तौड पर आक्रमण ही नही हुआ, जय का क्या प्रश्न ?

राजयोगी–महाराणा जी, शत्रु को चित्तौड़ तक आने देना मेवाड़ के वीर योद्धाओ ने अपना अपमान समझा और संसार जानता है कि मेवाड का प्रत्येक व्यक्ति संकट-काल मे स्वेच्छा से शस्त्र धारण कर सकता है।

(हाथ में मेवाड़ की राजपताका लिये हुए भील सैनिक के छद्मवेश में संग्रामसिंह का तथा सूरजमल और ज्वाला को बन्दी बनाये हुए कुछ भील सैनिकों का प्रवेश।)

तारा–मेवाड़ के सम्मान के संरक्षक, मेवाड के सच्चे सपूत आज मालवा के सुलतान की सेना को पराजित कर कुल और देश से द्रोह करने वाले सूरजमल और ज्वाला को बन्दी बनाकर महाराणा का आशीर्वाद प्राप्त करने आये है।

शृंगारदेवी–किन्तु उधर देखो, यह ज्वाला भी तुम्हारी सेना ने ही प्रज्वलित की है ?

तारा—नहीं, हम तो स्वय ही इस ज्वाला को देखकर आश्चर्यचकित हैं। मैंने तो यह समझा था कि हमारी सेना को शत्रु-सेना समझ कर चित्तौड दुर्ग मे स्थित क्षत्राणियाँ जौहर की ज्वाला को प्रज्वलितकर अपने सम्मान की रक्षा के लिये महासती महारानी पद्मिनी की परम्परा का पालन कर रही है।

(यमुना का प्रवेश)

यमुना—(ज्वाला से) अनर्थ हो हो गया राजकुमारी ! मैं उन्हे रोक नही पाई। सिरोही नरेश ने मालवा की सेना को निकट आई जानकर योजना के अनुसार अन्नागार मे आग लगा ही दी, किन्तु जब उन्हे ज्ञात हुआ कि यह मेवाड की विजयी सेना है, तो उन्होने भी अग्नि मे प्रवेश कर जीवनाहुति दे दी !

ज्वाला—सचमुच अनर्थ हो गया यमुना !

यमुना—(महाराणा से) महाराणा जी, इस अनर्थ का कारण मैं हूँ, मुझे दण्ड दीजिये। मेरे ही कारण राजकुमार पृथ्वीराज के प्राण गये। मैंने ही पिशाचिनी बनकर राजकुमारी आनन्ददेवी की माँग का सिंदूर चाट लिया। महाराणा जी, मुझ हत्यारिन को दण्ड दीजिये।

महाराणा रायमल—(राजयोगी से) राजयोगी जी, मैं यह सब क्या देख और सुन रहा हूँ। आपने आते ही कहा —आप मेवाडी सेना का जयघोष सुन रहे है, किन्तु मुझे न तो कही मेवाडी सेना दिखाई देती है न कही जयघोष सुनाई देता। मुझे तो इस समय मेरी पुत्री के सौभाग्य को निगल लेने वाली ज्वाला ही दिखाई दे रही है। वर्तमान मे तो क्या, भविष्य के गर्भ मे भी मुझे तो भयकर ज्वाला की लपटें दिखाई दे रही है। राजयोगी, मेरे प्राण इस अनुताप को सह नही सकते। अब तो मुझे भी उस भयानक ज्वाला की गोद मे बैठकर प्राणो की ज्वाला को शात करना होगा।

राजयोगी–आप–जैसे दृढ निश्चयी वज्रहृदय महान् व्यक्ति को विचलित नही होना चाहिये। आगामी पीढ़ी को सुखी बनाने के लिये इस पीढी को सब प्रकार की यातनायें सहनी पड़ेगी। जो व्यक्ति अपने मस्तक पर राजमुकुट धारण करता है, उसे सबसे अधिक बलिदान देना पडता है।

ज्वाला–काका जी, विध्वंस का खेल अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर अब समाप्त हो गया है। खेल में हार कैसी ? जीत कैसी। अनुताप कैसा ? शांति कैसी ? आप क्षत्रिय है, भगवान् राम के वंशज हैं, आपका जीवन लोक-कल्याण के लिये है। क्रोध मे आकर मैंने और दादा भाई ने मेवाड की राजलक्ष्मी को रक्त के समुद्र मे विसर्जित करना चाहा, किन्तु आपके तेजस्वी और दूरदर्शी पुत्र ने इस डूबती हुई नैया को उबार लिया और हमें भी उबार लिया।

महाराणा रायमल–मेरा पुत्र ? कौन-सा पुत्र ?

(संग्रामसिंह आगे बढकर महाराणा के चरण छूता है।)

संग्रामसिंह–(कृत्रिम स्वर में) मेवाड का प्रत्येक व्यक्ति आपका पुत्र है।

सूरजमल–और इस नाते सूरजमल भी आपका पुत्र है। बँधे न हो तो मेरे हाथ जो कल तक आपके मस्तक के ग्राहक रहे हैं वे आपके चरणों की रज अपने मस्तक पर धरने मे सौभाग्य माने।

संग्रामसिंह–(नकली दाढी-मूंछें हटाकर) दादाभाई, मेवाड़ यही तो आपके मुख से सुनना चाहता था। (भील सैनिकों से) बंदियों के बंधन खोल दो (सैनिक ज्वाला और सूरजमल के बंधन खोलते हैं।) संग्रामसिंह ने सारे मेवाड़ियों को बंधन-मुक्त करने के लिये वनवास और अज्ञातवास का व्रत लिया था। आज उसके प्रकट होने की स्वर्ण-वेला आ गई है।

महाराणा रायमल–(संग्रामसिंह को कलेजे से लगाकर) बेटा, आज मैं हँसू

या रोऊँ, क्या करूँ। (आँखो से अश्रु प्रवाहित होते है।)

शृगारदेवी–(सग्रामसिह के मस्तक पर हाथ रखकर) बेटा! आज तुममे मेवाड का सम्पूर्ण सौभाग्य और गौरव लौट आया है।

(अश्रु प्रवाहित होते है।)

सूरजमल–(महाराणा रायमल के चरणो में मस्तक रखकर) गगा-यमुना की पवित्र धाराओ के समान, इन आँखो के अश्रु-प्रवाह से मै अपनी पाप-कालिमा को धोकर नया ही व्यक्ति बन जाना चाहता हूँ।

(आँखो में आँसू छा जाते है।)

महाराणा रायमल–(प्रकृतिस्थ होकर सग्रामसिह और सूरजमल को अपने निकट खडाकर) मेवाड की शक्ति, सम्मान और विश्वास के प्रतीक राजकुमारो, स्वर्ग मे बैठे हुए वीरवर कुम्भा जी की वीणा को सुनो।

राजयोगी–वे कह रहे है–स्वार्थ, अभिमान और क्रोध मे आकर कभी जन्मभूमि के हित को मत भूलो। सत्ता और सम्मान पाने के लिये प्रतिस्पर्धा की भूल मत करो। क्षणिक लाभ के लिये देश के शत्रुओ को मित्र समझने की भूल मत करो। देश के प्रत्येक व्यक्ति को अपने समान समझो।

महाराणा–और अपने मस्तक पर राजमुकुट धारण कर अपने आपको एकलिग का दीवान समझो, राजा नही। तभी तुम इस कीर्ति-स्तम्भ की रक्षा कर सकोगे।

राजयोगी–मेवाड भूमि की जय!

सब–मेवाड भूमि की जय!

[पटाक्षेप]